Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LV (55), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सतनाम पंथ एवं सतनामी समाज : एक सांस्कृतिक परिदृश्य

लक्ष्मी नारायण कुर्रे * डॉ. महेश कुमार शुक्ला**

* शोधार्थी (इतिहास) डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोध निर्देशिक (इतिहास) डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – सतनाम पंथ भारतीय भक्ति-परंपरा की निर्गुण धारा से जुड़ा एक सामाजिक-धार्मिक आंदोलन है, जिसने 'सतनाम' अर्थात् सत्य-नाम को अपनी आस्था का केंद्र बनाया। उत्तर भारत में इसकी जड़ें सत्रहवीं सदी तक जाती हैं, जबकि मध्य भारत, विशेषकर छत्तीसगढ़ में इसे अठारहवीं-उन्नीसवीं सदी में संत गुरु घासीदास ने संगठित स्वरूप दिया। यह शोध-पत्र पंथ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, दार्शनिक सिद्धांतों, सामाजिक संगठन, प्रतीकों, लोककला पर्व-मेलों, संस्कारों तथा समकालीन परिवर्तनों का विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि सतनामी संस्कृति सत्य, समानता, अहिंसा, संयम और श्रम की गरिमा जैसे मूल्यों पर आधारित है और यह जातिगत ऊँच-नीच के विरुद्ध एक सशक्त सांस्कृतिक प्रतिरोध भी रही है।

शब्द कुंजी – सतनाम पंथ, सतनामी समाज, गुरु घासीदास, छत्तीसगढ़, पंथी नृत्य, जैतखाम, सामाजिक समानता।

प्रस्तावना – भारतीय समाज में धर्म केवल उपासना की पद्धति नहीं रहा, वह सामाजिक व्यवस्था, पहचान और प्रतिरोध का माध्यम भी रहा है। मध्यकाल से आधुनिक काल तक अनेक संत-परंपराओं ने जाति, कर्मकांड और विषमता को चुनौती दी। कबीर, रैदास, दादू, नानक और जगजीवन दास जैसे संतों की निर्गुण धारा में सतनाम पंथ का विशिष्ट स्थान है।

सतनाम दो शब्दों से बना है, सत अर्थात् सत्य या शाश्वत और नाम अर्थात् परम सत्ता का बोधक शब्द। सतनामी वे हैं जो सत्यनाम को ही ईश्वर का स्वरूप मानते हैं और उसी के आधार पर आचरण करते हैं। छत्तीसगढ़ में यह पंथ केवल धार्मिक मत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि एक संपूर्ण जीवन-दृष्टि और सांस्कृतिक पहचान बन गया। इसका नारा मनखे-मनखे एक समान आज भी इस समाज की मूल चेतना को व्यक्त करता है।

इसका महत्व इसलिए है कि सतनामी संस्कृति को प्राय: केवल जातिगत संदर्भ में देखा जाता है, जबकि इसमें दर्शन, लोकगीत, नृत्य, पर्व, सामुदायिक संगठन और नैतिक आचार की समृद्ध परंपरा विद्यमान है।

शोध के उद्देश्य एवं पद्धति– इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य हैं :

1. सतनाम पंथ के उद्भव और ऐतिहासिक विकास को समझना।
2. गुरु घासीदास के जीवन और उनकी शिक्षाओं का विश्लेषण करना।
3. सतनामी समाज की सामाजिक संरचना, रीति-रिवाज और लोक-संस्कृति का परिचय देना।
4. आधुनिक काल में समाज में आए परिवर्तनों और चुनौतियों का आकलन करना।

शोध पद्धति की दृष्टि से यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें ऐतिहासिक ग्रंथ, ब्रिटिशकालीन गजेटियर और नृवंशविज्ञान-संबंधी विवरण, समाजशास्त्रीय एवं इतिहास-विषयक शोध-ग्रंथ तथा लोक-परंपरा में प्रचलित जनश्रुतियाँ सम्मिलित हैं। जनश्रुतियों और श्रद्धा-आधारित कथाओं को यहाँ परंपरा के अनुसार कहकर प्रस्तुत किया गया है, ताकि ऐतिहासिक तथ्य और आस्था-आधारित मान्यता का अंतर बना रहे। यह अध्ययन क्षेत्र-सर्वेक्षण पर आधारित नहीं है, इसलिए स्थानीय भिन्नताओं पर आगे प्रत्यक्ष शोध की गुंजाइश बनी रहती है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– सतनाम नाम के साथ जुड़ी सबसे प्रारंभिक ज्ञात धारा उत्तर भारत की है। सत्रहवीं सदी में हरियाणा के नारनौल क्षेत्र में सतनामी नाम से प्रसिद्ध एक संप्रदाय सक्रिय था, जिसके अनुयायी मुख्यत: किसान, कारीगर और छोटे व्यापारी थे। परंपरा में इसके प्रवर्तक के रूप में बीरभान का नाम लिया जाता है। मुगल काल के ऐतिहासिक विवरणों के अनुसार सन् 1672 में नारनौल में मुगल प्रशासन और सतनामियों के बीच संघर्ष हुआ, जिसे औरंगजेब के काल की महत्वपूर्ण घटनाओं में गिना जाता है। इतिहासकार इस विद्रोह के कारणों में कृषि-कर, स्थानीय अधिकारियों से विवाद और धार्मिक असंतोष, तीनों की भूमिका देखते हैं।

इसके बाद अवध क्षेत्र में संत जगजीवन दास ने सतनामी परंपरा को नया रूप दिया। उन्होंने निर्गुण भक्ति, नैतिक आचरण और सामाजिक समानता पर बल दिया और उनके अनुयायियों का एक पृथक संप्रदाय विकसित हुआ। उत्तर भारत की ये धाराएँ और छत्तीसगढ़ का सतनाम पंथ नाम की समानता रखते हैं, किंतु विद्वानों में इनके परस्पर संबंध को लेकर मतभेद है। कुछ इन्हें एक ही व्यापक परंपरा की शाखाएँ मानते हैं, जबकि अन्य छत्तीसगढ़ के आंदोलन को स्थानीय परिस्थितियों से उपजा स्वतंत्र आंदोलन मानते हैं।

छत्तीसगढ़ का सामाजिक परिदृश्य– अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में छत्तीसगढ़ पर नागपुर के भोंसले मराठों का शासन था और 1854 के बाद यह ब्रिटिश प्रशासन के अधीन आया। उस समय का समाज कृषि पर आधारित था और जाति-व्यवस्था अत्यंत कठोर थी। चर्मकार कहे जाने वाले समुदाय को सामाजिक रूप से अछूत माना जाता था। उन्हें मंदिर-प्रवेश, सार्वजनिक कुओं के उपयोग और सम्मानजनक सामाजिक व्यवहार से वंचित रखा जाता था। इसी सामाजिक पीड़ा और आत्मसम्मान की खोज के बीच सतनाम पंथ का उदय हुआ। छत्तीसगढ़ के सतनामियों में अधिकांश इसी समुदाय से आते

हैं, यद्यपि पंथ का संदेश सैद्धांतिक रूप से सबके लिए खुला था।

गुरु घासीदास: जीवन और कार्य– परंपरा और उपलब्ध विवरणों के अनुसार गुरु घासीदास का जन्म 18 दिसंबर 1756 को वर्तमान छत्तीसगढ़ के बलौदाबाजार–भाटापारा जिले के गिरौदपुरी (गिरौद) गाँव में हुआ। उनके पिता का नाम महंगूदास और माता का नाम अमरौतिन बताया जाता है। उनका विवाह सफुरा देवी से हुआ। बाल्यावस्था से ही वे संवेदनशील, चिंतनशील और सत्य के जिज्ञासु माने जाते थे। उस समय की सामाजिक विषमता, शोषण और अंधविश्वास ने उन्हें गहराई से प्रभावित किया।

जनश्रुति के अनुसार वे सत्य की खोज में निकले और गिरौदपुरी के निकट छाता पहाड़ में दीर्घ साधना की। कथा है कि वहीं उन्हें सतनाम का साक्षात्कार हुआ और उन्होंने इस सत्य का संदेश जन–जन तक पहुँचाने का संकल्प लिया। इस कथा के चमत्कारिक अंश श्रद्धा के विषय हैं, जबकि इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने अत्यंत सरल भाषा, लोक–कथाओं और उपदेशों के माध्यम से एक व्यापक सामाजिक चेतना जगाई।

घासीदास किसी लिखित ग्रंथ के रचयिता के रूप में नहीं, बल्कि वाचिक उपदेशों के संत के रूप में जाने जाते हैं। उनकी शिक्षाएँ वाणी, उपदेश, भजन और पंथी गीतों के रूप में पीढ़ी–दर–पीढ़ी चली आईं। उनके निधन की तिथि के बारे में निश्चित मतैक्य नहीं है, आम तौर पर उन्नीसवीं सदी के मध्य (लगभग 1850) का उल्लेख मिलता है। उनके पश्चात उनके पुत्र गुरु बालकदास ने पंथ के संगठन को आगे बढ़ाया। बालकदास का नेतृत्व सामाजिक और सैन्य–प्रशासनिक संगठन की दृष्टि से उल्लेखनीय माना जाता है, और परंपरा के अनुसार 1860 में उनकी हत्या हो गई।

सतनाम पंथ के सिद्धांत: सतनाम पंथ की शिक्षाएँ किसी जटिल दार्शनिक विवेचन की जगह जीवन–व्यवहार की सरल नैतिकता पर आधारित हैं। प्रचलित रूप में इन्हें 'सात वचन' या मुख्य सिद्धांतों के रूप में समझा जाता है, यद्यपि विभिन्न स्रोतों में सूची के शब्दों में थोड़ी भिन्नता मिलती है।

सतनाम में आस्था : परमात्मा निराकार और सत्यस्वरूप है। सत्य ही सर्वोच्च धर्म है।

मूर्तिपूजा का निषेध: ईश्वर की उपासना के लिए मूर्ति, पुरोहित या जटिल कर्मकांड आवश्यक नहीं माने गए।

जाति–भेद का निषेध : सब मनुष्य समान हैं। मनखे–मनखे एक समान इसका केंद्रीय सूत्र है।

मांसाहार का निषेध:जीव–दया और अहिंसा के कारण शाकाहार का आग्रह।

नशा–निषेध: शराब, तंबाकू, गाँजा आदि का त्याग, ताकि जीवन और परिवार सुरक्षित रहें।

नैतिक संयम: चोरी, जुआ, व्यभिचार, झूठ और छल से दूर रहना, तथा पराई स्त्री को माता–बहन के समान मानना।

पशुओं के प्रति करुणा एवं श्रम की मर्यादा : पंथ की परंपरा में गाय को हल में न जोतने और दोपहर के बाद हल न चलाने जैसी मान्यताएँ बताई जाती हैं। ये श्रमजीवी समाज में पशुओं के प्रति संवेदनशीलता का प्रतीक हैं।

इन सिद्धांतों का समाजशास्त्रीय अर्थ गहरा है। मांसाहार और नशे का त्याग, स्वच्छता और संयम जैसे आचरण अनेक अध्येताओं के अनुसार सामाजिक प्रतिष्ठा अर्जित करने और आत्मसम्मान की पुनर्रचना की रणनीति भी थे। मूर्तिपूजा और पुरोहिताई का निषेध ब्राह्मण–केंद्रित कर्मकांडीय व्यवस्था के प्रति मौन असहमति का स्वर था। सतनाम पंथ का ईश्वर सबके लिए सुलभ है और उसकी प्राप्ति के लिए किसी मध्यस्थ की जरूरत नहीं।

एक और महत्वपूर्ण पक्ष है श्रम की गरिमा। सतनामी परंपरा में खेती, पशुपालन और हस्तकौशल को हेय नहीं, सम्मानजनक कर्म माना गया। यह दृष्टि उस सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध थी जो श्रम करने वालों को निम्न और श्रम न करने वालों को श्रेष्ठ समझती थी।

सामाजिक संगठन– सतनामी समाज में गुरु को सर्वोच्च धार्मिक–सामाजिक आधार माना जाता है। गुरु–गद्दी की परंपरा गुरु घासीदास के वंशजों के माध्यम से चली आ रही है और भंडारपुरी (रायपुर क्षेत्र के निकट) इसका प्रमुख केंद्र माना जाता है। परंपरा के अनुसार गुरु के नीचे महंत, भंडारी, साटीदार, छड़ीदार जैसे पदाधिकारियों की व्यवस्था चलती रही, जो धार्मिक आयोजनों, सामाजिक विवादों के निपटारे और सामुदायिक अनुशासन का काम देखते थे। इस व्यवस्था के नाम और कार्य–विभाजन में क्षेत्रानुसार भिन्नता मिल सकती है।

ग्राम स्तर पर समाज की अपनी पंचायती व्यवस्था रही है, जिसमें विवाह–संबंधी विवाद, पारिवारिक झगड़े और सामाजिक आचरण के प्रश्न सुलझाए जाते हैं। आज सतनामी समाज अनेक सामाजिक संगठनों, समिति–भवनों और सतनाम सभाओं के माध्यम से संगठित है।

प्रतीक एवं पवित्र स्थल :

जैतखाम : सतनामी संस्कृति का सबसे प्रमुख प्रतीक जैतखाम है, जो एक ऊँचा स्तंभ है और जिस पर श्वेत ध्वज फहराया जाता है। सफेद रंग सत्य, शांति और पवित्रता का प्रतीक माना जाता है। गाँव–गाँव में जैतखाम स्थापित है और वही सामुदायिक उपासना, पर्व और सभाओं का केंद्र है। गिरौदपुरी में निर्मित जैतखाम को देश के सबसे ऊँचे ऐसे स्मारकों में गिना जाता है, जिसकी ऊँचाई लगभग 77 मीटर बताई जाती है।

पवित्र स्थल : गिरौदपुरी (गुरु घासीदास की जन्मस्थली और छाता पहाड़ की साधना–स्थली), भंडारपुरी (गुरु–गद्दी का केंद्र) और तेलासी जैसे स्थान समाज की आस्था के प्रमुख केंद्र हैं।

अभिवादन: सतनाम या जय सतनाम का उच्चारण परस्पर अभिवादन में प्रचलित है, जो रोजमर्रा के व्यवहार में भी पंथ की उपस्थिति बनाए रखता है।

पंथी नृत्य एवं लोककला– सतनामी संस्कृति की सबसे जीवंत अभिव्यक्ति पंथी नृत्य है। यह नृत्य गुरु घासीदास की महिमा, सतनाम के संदेश और संत–परंपरा के गुणगान पर केंद्रित होता है। नर्तक सामान्यत: सफेद धोती, सफेद बंडी या कुर्ता पहनते हैं, गले में माला और माथे पर तिलक या चंदन धारण करते हैं तथा पैरों में घुँघरू बाँधते हैं। मांदर और झांझ की ताल पर नृत्य आरंभ धीमी गति से होता है और धीरे–धीरे अत्यंत तीव्र हो जाता है। इसमें मानव–पिरामिड बनाना, शरीर को झुकाकर घूमना और कलाबाजियों जैसे अद्भुत करतब शामिल हैं, जो शारीरिक सौष्ठव और सामूहिक समन्वय का परिचय देते हैं।

पंथी गीत इस नृत्य के प्राण हैं। इन गीतों में गुरु की स्तुति, सतनाम की महिमा, जीवन की नश्वरता, कर्म की श्रेष्ठता और सामाजिक समानता के संदेश मिलते हैं। गीतों की भाषा छत्तीसगढ़ी है, जिसमें सरलता और भक्ति का सहज प्रवाह है। गीत के बीच में 'सतनाम–सतनाम' के जयकारे उत्साह को बढ़ाते हैं। छत्तीसगढ़ के लोक–कलाकारों ने पंथी नृत्य को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय मंचों तक पहुँचाया है, और यह आज प्रदेश की पहचान बन चुका है।

पंथी नृत्य के अतिरिक्त सतनामी परंपरा में भजन, चौपाई, साखी और वाचिक उपदेशों की समृद्ध परंपरा है। इन लोक–रचनाओं में कबीर और रैदास जैसी निर्गुण संत–वाणी की झलक मिलती है। भजन सभाओं में सामूहिक

गायन के माध्यम से समाज एक-दूसरे से जुड़ता है और नैतिक शिक्षा अगली पीढ़ी तक पहुँचती है।

पर्व एवं मेले- गुरु घासीदास जयंती 18 दिसंबर सतनामी समाज का सबसे बड़ा पर्व है। इस दिन गाँव-गाँव में जैतखाम पर नया ध्वज चढ़ाया जाता है, शोभा-यात्राएँ निकलती हैं, पंथी नृत्य होते हैं और सामूहिक भोज आयोजित किया जाता है। छत्तीसगढ़ में यह तिथि सार्वजनिक अवकाश के रूप में भी मान्य है, जिससे इस परंपरा को राज्य-स्तरीय मान्यता मिली है।

गिरौदपुरी का वार्षिक मेला फाल्गुन मास में आयोजित होता है और कई दिनों तक चलता है। इसमें हजारों श्रद्धालु गुरु के जन्मस्थान तथा आसपास के पवित्र स्थलों के दर्शन के लिए आते हैं। मेले में भजन-कीर्तन, लोकनृत्य, ग्रामीण हाट और धार्मिक प्रवचन के माध्यम से सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता है। भंडारपुरी और अन्य गुरु-स्थानों पर भी विशेष अवसरों पर बड़े आयोजन होते हैं।

जीवन-संस्कार एवं सामाजिक रीतियाँ- जन्म रू शिशु-जन्म पर परिवार में सरल अनुष्ठान किए जाते हैं और सतनाम के स्मरण के साथ नामकरण की परंपरा है। मूर्ति-पूजा और जटिल कर्मकांडों से परहेज के कारण संस्कार सादगीपूर्ण होते हैं।

विवाह: सतनामी विवाह परंपरा की विशेषता उसकी सादगी और कम खर्च है। परंपरा में विवाह प्राय: समाज के महंत, भंडारी या बुजुर्गों की उपस्थिति में सतनाम के साक्षी में संपन्न होता है, और ब्राह्मण पुरोहित की अनिवार्यता नहीं रखी गई। दहेज, दिखावे और अनावश्यक खर्च का विरोध इस समाज की नैतिक चेतना का हिस्सा रहा है, यद्यपि वर्तमान समय में सामाजिक दबाव के कारण स्थानीय स्तर पर बदलाव भी देखे जाते हैं।

मृत्यु: मृत्यु-संस्कार में आडंबर से बचने और सादगी रखने पर बल है। इन रीतियों में क्षेत्र और परिवार के अनुसार भिन्नता मिलती है, इसलिए एक ही रूप को सार्वभौमिक नहीं कहा जा सकता।

भोजन, पहनावा एवं जीवन-शैली- सतनामी समाज का भोजन प्राय: शाकाहारी है। पंथ की परंपरा में कुछ विशेष सब्जियों और दालों (जैसे लाल भाजी या मसूर) के सेवन को लेकर वर्जनाओं का उल्लेख मिलता है, पर ये मान्यताएँ सभी क्षेत्रों में समान रूप से लागू नहीं दिखतीं। छत्तीसगढ़ी खान-पान जैसे चावल, दाल, भाजी, चीला, फरा और ठेठरी-खुरमी इस समाज के भोजन में सहज रूप से शामिल हैं। मदिरा और मांसाहार से दूरी इस समाज की पहचान का एक आधार रही है।

पहनावे में सफेद रंग को पवित्रता का प्रतीक माना गया है और पर्व-आयोजनों में पुरुष सफेद वस्त्र तथा स्त्रियाँ सादी साड़ी पहनती हैं। आभूषण और सज्जा में सादगी का आग्रह रहा है। जीवन-शैली में सामूहिकता, परिश्रम, पारस्परिक सहयोग और सत्संग की प्रधानता दिखाई देती है।

आधुनिक परिवर्तन- स्वतंत्रता के बाद सतनामी समाज ने शिक्षा, राजनीति और सामाजिक सुधार के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की। भंडारपुरी के गुरु अगमदास और उनकी पत्नी मिनीमाता का नाम सामाजिक-राजनीतिक चेतना की दृष्टि से विशेष रूप से लिया जाता है। मिनीमाता को छत्तीसगढ़ क्षेत्र की प्रमुख महिला सांसदों में गिना जाता है, जिन्होंने दलित और वंचित समुदायों के अधिकारों की आवाज उठाई। समाज के भीतर शिक्षा के प्रसार, छात्रावासों और सामाजिक संगठनों की स्थापना ने नई पीढ़ी को अवसर दिए हैं।

गुरु घासीदास की स्मृति को राज्य ने भी संस्थागत रूप दिया है। बिलासपुर स्थित गुरु घासीदास विश्वविद्यालय (अब केंद्रीय विश्वविद्यालय) उनके नाम पर स्थापित है, और राज्य में उनके नाम पर राष्ट्रीय उद्यान एवं अन्य संस्थान भी हैं। राज्य सरकारों ने गिरौदपुरी के विकास, जैतखाम निर्माण और पंथी नृत्य के संरक्षण हेतु योजनाएँ चलाई हैं। इन पहलों से यह संस्कृति केवल एक समुदाय तक सीमित न रहकर प्रादेशिक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में मान्य हुई है।

सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया के प्रसार ने भी पंथी गीतों, जयंती आयोजनों और गुरु-वाणी को व्यापक पाठक-श्रोता वर्ग तक पहुँचाया है। साथ ही, शहरीकरण और प्रवास के कारण युवा पीढ़ी में परंपराओं के प्रति दृष्टिकोण बदल रहा है।

चुनौतियाँ - समकालीन सतनामी समाज के सामने कई चुनौतियाँ हैं। पहली, सामाजिक भेदभाव और आर्थिक असमानता आज भी कई स्थानों पर समाज के लिए संघर्ष का कारण है। दूसरी, पंथ के भीतर गुरु-गद्दी, परंपरा की व्याख्या और संगठनात्मक नेतृत्व को लेकर मतभेद देखे जाते हैं। तीसरी, पंथ के मूल सिद्धांतों जैसे मूर्ति-पूजा-निषेध पर बाहरी धार्मिक प्रभावों और मुख्यधारा की हिंदू परंपराओं के साथ समन्वय को लेकर बहस बनी रहती है। चौथी, लिखित साहित्य के सीमित प्रलेखन के कारण वाचिक परंपरा के विलुप्त होने का खतरा है। पाँचवीं, युवाओं में शिक्षा तो बढ़ी है, परंतु रोजगार और सामाजिक सुरक्षा की समस्याएँ बनी हुई हैं।

इन चुनौतियों के समाधान के लिए परंपरा के दस्तावेजीकरण, स्थानीय इतिहास पर शोध, पंथी कला के प्रशिक्षण-संस्थानों की स्थापना और शिक्षा-रोजगार के अवसरों के विस्तार जैसे कदम उपयोगी हो सकते हैं।

निष्कर्ष - सतनाम पंथ और सतनामी समाज का अध्ययन यह दर्शाता है कि भारतीय संत-परंपरा केवल आध्यात्मिक नहीं, सामाजिक परिवर्तन की भी वाहक रही है। गुरु घासीदास ने सतनाम की सरल अवधारणा के माध्यम से जाति-आधारित भेदभाव, कर्मकांड और अंधविश्वास को चुनौती दी और समता, सत्य, अहिंसा तथा श्रम की गरिमा पर आधारित जीवन-दृष्टि प्रस्तुत की। जैतखाम, पंथी नृत्य, गुरु-जयंती और गिरौदपुरी का मेला इस संस्कृति के जीवंत प्रतीक हैं जो सामूहिक पहचान और आत्मगौरव को सुदृढ़ करते हैं। आधुनिक काल में शिक्षा, राजनीतिक भागीदारी और सांस्कृतिक संस्थाओं के माध्यम से इस समाज ने नई ऊँचाइयाँ पाई हैं, फिर भी समानता का स्वप्न पूरी तरह साकार करना शेष है। मनखे-मनखे एक समान का संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना दो सदी पहले। इस संस्कृति का संरक्षण, दस्तावेजीकरण और अकादमिक अध्ययन न केवल एक समुदाय के लिए, बल्कि समतामूलक भारतीय समाज की निर्मिति के लिए भी आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Dube, Saurabh. Untouchable Pasts: Religion, Identity, and Power among a Central Indian Community] 1780–1950. State University of New York Press, 1998.
2. Russell, R. V. and Hira Lal.The Tribes and Castes of the Central Provinces of India- Macmillan, 1916.
3. Sarkar, Jadunath. History of Aurangzib, (नारनौल के सतनामी विद्रोह के संदर्भ में).
4. Habib, Irfan. The Agrarian System of Mughal India, Oxford University Press.
5. छत्तीसगढ़ संस्कृति परिषद एवं राज्य जनसंपर्क विभाग द्वारा प्रकाशित गुरु घासीदास एवं पंथी नृत्य संबंधी सामग्रीय बिलासपुर/रायपुर जिला गजेटियर।